*International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)*
*ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714*
*www.ijhssi.org ||Volume 7 Issue 02 Ser. II || February 2018 || PP 78-80*

# वर्तमान वैष्विक परिदृष्य में कालिदास के महाकाव्यों की प्रासंगिकता

डॉ0 सविता गौतम
*एसोसिएट प्रोफेसर–संस्कृत*
*राजकीय महाविद्यालय माँट, मथुरा (उ0प्र0)*

आज के इस वर्तमान आधुनिक युग में यदि चारों ओर दृष्टि दौडाकर देखें तो यही दिखाई देता है कि आज का मानव समाज परस्पर कलह तथा वैमनस्य से छिन्न–भिन्न हो रहा है। मानवता के लिए यह महान सङट का समय है। द्वन्दात्मकता इस सृष्टि का स्वभाव दिखायी देने लगा है। ऐसा लगता है कि समकालीन विश्व एक ब्रहमाण्डीय अवधारणा के साथ है जिसे भौतिक विज्ञान की श्रृङला से जकड–सा दिया गया है। इससे एक अनिश्चयात्मक स्थिति बनती जा रही है जो अन्तहीन भय एवं सन्देह से भरी हुयी है ईशावास्यमिद सर्वं के स्थान पर भूतावास्यमिद सर्वं समझा जाने लगा है। 'तेन त्यक्तेन भुञजीथाः' के स्थान पर तेन रक्तेन भुञजीथाः का व्यवहार मानव समाज में होता जा रहा है यह नितान्त वैयक्तिकता और आसुरी भाव की स्थिति है। इसी महासमस्या के समाधान में जियो और जीने दो की भावना से सभी वाङमय रचे जाते हैं। भारतीय साहित्य हो या अन्य साहित्य सभी ने मनुष्य और समाज का हितचिन्तन किया है।

संस्कृत वाङमय का इस क्षेत्र में विशेष योगदान रहा है। इसमें भी काव्य तथा उसमें भी महाकवि कालिदास का स्थान सार्वकालिक एवं सार्वभौम है। आज के इस विकट परिवेश में तो इनकी कहीं अधिक आवश्यकता महसूस होती है। कालिदास का कहना है कि देहधारियों के लिए मरण ही प्रकृति है जीवन तो विकृतिमात्र हैयदि जन्तु श्वास लेता हुआ एक क्षण के लिए भी जीवित है तो यह उसके लिए लाभ है–

**"मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः।**
**क्षणमप्यतिष्ठते श्वसन यदि जर्न्तुननु लाभवानसौ।।" 1**

वास्तव में इस जीवन को महान लाभ मानना चाहिये तथा इसे सफल बनाने के लिए अर्थ, धर्म तथा काम का सामञजस्य उपस्थित रहना चाहिये। अर्थ और काम की तुलना में कालिदास धर्म को महत्व प्रदान करते है। परन्तु अर्थ और काम अपनी स्वतन्त्रता और सत्ता बनाये रखने के लिए धर्म का विरोध करते रहते हैं। धर्म को दबाकर अर्थ अपनी प्रबलता चाहता है और धर्म ध्वस्त करके काम भी अपना प्रभाव जमाना चाहता है। धर्म कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता, परन्तु भगवान श्रीकृष्ण के शब्दों में धर्म से अविरुद्ध काम भगवान की ही विभूति है। कालिदास ने अपने काव्यों तथा नाटकों में 'धर्म विरुद्धः कामोऽस्मि लोकेषु भरतर्षभ' इस गीता वाक्य की प्रमाणिकता अनेक प्रकार से प्रमाणिकता की है।

कालिदास का कवि कर्म ही प्रकृतिहिताय है। इनकी वैश्विक दृष्टि सार्वकालिक और सार्वभौमिक है क्योंकि यह विश्व सत्व रजस् और तमस् से ओतप्रोत है और जब भी राजस् और तामस् का प्रभाव बढता है लोग उससे बचने के प्रयत्न में सत्व के अनुसन्धान मतें लग जाता है। अतः ऐसी स्थिति में श्रेष्ठ साहित्य की प्रासंगिकता बनी रहती है। महाकवि का जीवन दर्शन पूर्णतः वैदिक है जिसे हम अध्यात्मिक से ओतप्रोत पाते हैं। यह किसी भी धर्म के अनुयायी के लिये श्रेयस्कर है क्योंकि यह मानव विरोधी नहीं है। भारतीय जीवन पद्धति का दृष्टिकोण इसी आध्यात्मिक में केन्द्रित है। आत्मा, पुनर्जनम, कर्मफल तथा मोक्ष इन चारों को जीवन का मूलतत्व कहा जा सकता है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में भी इन्हीं तत्वों के अनुसार कालिदास साहित्य में जीवनदर्शन की सगति विचारणीय है, क्योंकि जिस विश्वबन्धुत्व जैसे तत्व की तलाश में यह विश्व भटक रहा है उसका मूल यहॉ मिल सकता है। सहज शान्ति और अकारण बन्धुता के लिए जिस उदारता, ओजस्वता, ज्ञान तथा त्याग आदि की अपेक्षा होती है इन्हीं से मनुष्य में रहने वाली आत्मा का विकास होता है जो कि सर्वजनसुखाय होती है। स्वार्थ से उठकर कवि ने अपने पात्रों को आत्मा से विभूषित किया है।

रघुवंश में महाकवि ने जिन राजाओं का चरित्र स्थापित करते हैं वे केवल राजा ही नहीं अपितु महापुरुष हैं उनमें जितनी वीरता है उतनी ही दया है करुणा है त्याग है, जितना भोग है उससे बढकर कहीं योग है। मानव समाज के लिए तो ऐसे ही मनुष्य का श्रेष्ठतम रुप विकसित हो पाता है, परन्तु आज विश्व एक अत्यन्त उलझी हुई स्थित में है सभी को कुछ कहने करने का अधिकार है, परिमाणमतः इससे एक अप्रमाणितकता का वातावरण बन गया है एक और विज्ञानवादियों की नितान्त भौतिकता है तो दूसरीं ओर ज्ञानवादियों की शाश्वत अध्यात्मिकता इन दोनों के द्वन्द में अवसर वादियों ने अपना ऐसा छद्रजाल बिछा दिया है कि लोक उसमें फॅस सा गया है इससे यदि स्पष्ट शब्दों में कहा जाये तो यह ऐसा स्वार्थ वाद है जो कि सामाज्य वाद से होकर अर्थ वाद से होते हुए आतंक वाद के चरम बिन्दु पर पडाव डाले हुए है वहीं आज का वैश्विक परीदृश्य है जो एक चक्र जैसा है कालीदास के काव्यों में सामाज्य वाद के दो रुप हम देख पाते है एक ओर जहॉ रघुवशीं और चन्द्रवशींयों का लोकपालक सामाजयवाद है ता वहीं दूसरी ओर रावण ..... लोकध्वशंक सामाज्यवाद वर्तमान में किस ..... की अपेक्षा अपेक्षा है यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है ज्ञान विज्ञान और आधात्मक के केन्द्रों को नष्ट कर देना मानव का मानवीय स्वरुप है आतंकवाद की छाया से तृस्त इस विश्व के समक्ष अभी भी कोई समाधान नहीं है। अत समकालीन विश्व चिन्ह ने मानवीय मुल्य के नाम से सत्य प्रेम धर्म आदि

सत तत्वो को परिभाषित किया है इस दृष्टि से भी महाकवि कालीदास की श्रेष्ठा असन्दिग्ध है महाकवि का जीवन मनुष्य का जीवन कैसा होना चाहिये इसके लिए दिलीप का चरित्र दृष्टव्य है।

जो कि निर्भय होकर आश्रितों की रक्षा करते थे। धैर्य पूर्वक अपने धर्म का पालन करते थे। लोभरहित होकर धन इकठठा करते थे। और मोह रहित होकर संसार के सुखों का भोग करते थे अज आर्त्तों की रक्षा के निमित्त शक्ति का उपयोग करने वाले अपनी विद्या बुद्धि से पंडितों का सम्मान करने वाले तथा अपने धन वैभव से परोपकार महाकवि ने जीवात्मा और परमात्मा के भेदाभेद को समझा है और लो में उनकी गूढता को सरल रुप में प्रकाशित किया जाए यह भी अच्छी प्रकार से जानते हैं। तभी तो उनके काव्यों में नीरस दार्शनिक सम्पति की सरस विच्छित्ति समष्टि और यष्टि का भेद भुजा देती हैं। इसलिए रघुवंश के राम एक श्रेष्ठतम आदर्श पुरुष के रुप में अधिक प्रतीत होते हैं। कालिदास भले ही उन्हें हरि कहते हैं किन्तु उनकी स्थापना एक महामानव के रुप में करते हैं। प्रजापालन में आज के शासक यदि रघु दिलीप और राम आदि जैसे ही उदारता और त्यागादि भाव आंशिक रुप में भी ला सकें तो आतकवाद जैसी बुराईयॉ स्वत समाप्त हो जायेगीं। रामादि के चरित्र का अनंकरण वसतुत आत्मा के विकास की श्रेष्ठ दशा है जो उसे ईश्वरत्व प्रदान करती है। समकालीन परिदृश्य में कुमारसंभव का यह सन्दर्भ बहुत ही प्रासडिक लगता है जहॉ आतंक से मुक्ति के लिए मोक्ष का उदाहरण दिया है–

**तदिच्छामो वयं स्रष्टु सेनान्यं तस्यं शानतये। कर्मबन्धच्छिदं धर्म भवस्येव मुमुक्षव।**

ताराकसुर से संत्रस्तदेवताओं की ब्रहमा जी की रक्षा की गुहार आज के मनुष्य की पुकार जैसे लगती है। जैसे ताराकसुर ने सवीविध देवत्व को मलिन कर दिया था। वैसे ही आज आतकवाद ने हम मनुष्यों को सभी दैवीवुत्तियों पर ग्रहण सा लगा दिया है, परन्तु आज का मनुष्य भी अपनी सात्विकता को पुजीभूत कर ले तो उसके अन्दर का तारक और उसका आतंक समाप्त हो ही जायेगा। कालिदास ने देश अथवा धर्म की रक्षा के लिए जीवन का उत्सर्ग कर देना सच्चे पुरुषत्व का लक्षण बताया है। श्रीराम के प्रसंग में इन्होने प्रकृत पुरुषत्व को आदर्शीकृत स्वरुप में उपन्यस्त किया है और यह दिखाया है कि वह कैसे अविचल शान्ति एवं ततपरता के साथ अपनी प्रियतम एवं मधुरतम वस्तु का भी परित्याग करने में समर्थ बन जाते हैं। महाकवि महाजीवन के कर्म की अनिवार्यता को उसके विभिन्न रुपों में साकेंतिक करते हुए कर्ममार्ग में प्रवृत्त रहने का सन्देश देते हैं।नित्य नैमित्तिक काम्य तथा निषिद्ध कर्मो का स्पष्ट निर्वचन सन्ध्यवन्दनानि संस्कार यज्ञ तथा सदाचार आदि के रुप में इनके काव्यों में देखने को मिल रहे हैं। उपनिषद वाक्य कुर्वत्रेवेह कर्माणि जिजीवियेह शतं समाः तथा श्रीमदगवदीता के कर्मण्येवाधिका सस्ते रुप कर्मयोग का काव्यात्मक सन्देश कालिदास के साहित्य में प्रतिबिम्बित होकर न केवल जनसाधरण को उसके कर्तव्य मार्ग में प्रवृत्त होने का उपदेश देता है। अपितु व्यक्ति परिवार समाज देश और पूरी वसुधा तक की अखण्डता की रक्षा करते रहने का विमर्श है। आज व्यक्ति हो या समाज केवल अपने अधिकार की बात करता है। संयोग से शासन पक्ष की ओर से अधिकार को सुरक्षित करने के लिए बहुत प्रयत्न किये जा रहे हैं। कहीं मानवाधिकार तो कहीं स्त्री अधिकार तो कहीं शिशु अधिकार आदि। वस्तुत व्यक्ति से समाज तक के लिये तो अनिवार्य कर्तव्य होना चाहिये। कर्तव्य करें ही नहीं और केवल अधिकार की बात करें तो अराजकता फैलेगी ही। इस लिए कालिदास के पात्रों को कर्तव्य के पगति असावधान होने पर और कर्म में उदासीन होने पर कुफल ही मिलता है। मेघदूत इसी कर्तव्यच्युति के दुष्परिणाम की सूचना से आरम्भ होता है। दूसरे के कर्म में बाधक बने राक्षसकादिकों का अन्त महाकवि वर्णित करते ही हैं। वस्तुतः अपने लिए निहित कर्मों के पगति जागरुक रहना और कर्तव्यपरायण रहना ही व्यक्ति और समाज को सभ्य और सुखी बनाता है। अतः आज चाहे भौतिकवाद–विज्ञानवाद जितना बढ जाए, चाहे जैसे जीवन का व्याखान करें, जीवन की उपयोगिता तो रहेगी ही। महाकवि अपने समय के सामाजिक परिवेश को बहुत ही गम्भीरता से जान रहे थे।इसीलिये महाकवि ने काव्य के माध्यम से मनुष्य जीवन के श्रेष्ठ दार्शनिक तत्वों और आदर्शों को न केवल अपनाया अपितु उनका प्रचार प्रसार भी किया। आसुरी वृत्तियों पर नियन्त्रण होना ही आध्यात्मिक साधना है और यही साधना मनुष्य को निश्रेयस बना देती है। मनुष्य और समाज का कल्याणकारी रुप यही है। कालिदास इसी का सकेंत सस्थाणुः परभक्तियोगसुलभो निःश्रेयसायास्तु वः से करते हैं। स्थाणु अर्थात अचल अटल शिव नित्यमंग्डल हैं और यह नित्यमंग्डल स्थिर भक्ति योग से सुलभ है। चित्तवृत्तियों को द्रिय तथा विषयों से विमुख कर आत्मोन्मुख कर लेना ही तो आत्मा से परमात्मा का अभेद बनता है और जीव सभी जीवों में आत्मवद् बोध करता है। आज के विश्व की इसी बन्धुता की अपेक्षा है और यह किसी शासन प्रशासन से नहीं हो सकता, आत्मानुशासन से ही होगा।

सर्वमंग्डल ही महाकवि कालिदास का सन्देश हैं–

सर्वस्तरत दुर्गाणि सर्वो भद्रणि प्श्यतु।
सर्वः कामानवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु।।

## सन्दर्भ–

1. दयाल, डॉ0 दीन। विवाह विच्छेद (तलाक) भाग–01।
द् लिटरटी काउन्सिल पब्लिकेशन डिवीजन, मथुरा।
2. दयाल, डॉ0 दीन। विवाह विच्छेद (तलाक) भाग–02।

द् लिटरटी काउन्सिल पब्लिकेशन डिवीजन, मथुरा।
3. अग्रवाल, डॉ0 मुरारीलाल। रघुवंशममहाकाव्यम् महा कवि कालिदास प्रजीतम्, (प्रथमः सर्गः)। संयज पब्लिकेशन, हॉस्पीटल रोड, आगरा।
4. यादव, डॉ0 हरिनारायण। ईशावास्योपनिषाद् (यजुर्वेद का 40 वाँ अध्याय)। महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा–2।
5. त्रिपाठी, डॉ0 बाबूराम। कुमार सम्भव महाकाव्यम् महाकवि कालिदासकृतम् (प्रथमः सर्गः)। महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा–2।
6. त्रिपाठी, डॉ0 बाबूराम। कुमार सम्भव महाकाव्यम् (पन्चमः सर्गः)।
महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा–2।